मृदा अपरदन – प्रकार, कारक, कारण, दुष्परिणाम, उपाय, संरक्षण

samanyagyan.com/hindi/gk-soil-erosion-types-factors-causes

मृदा अपरदन किसे कहते हैं? – What is soil erosion?

मृदा कृषि का आधार है। यह मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं, यथा- खाद्य, ईंधन तथा चारे की पूर्ति करती है। इतनी महत्वपूर्ण होने के बावजूद भी मिट्टी के संरक्षण के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण अपनाया जाता है। यदि कहीं सरकार द्वारा प्रबंधन करने की कोशिश की भी गई है तो अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया गया है। फलतः मिट्टी अपनी उर्वरा शक्ति खोती जा रही है। मृदा अपरदन वस्तुतः मिट्टी की सबसे ऊपरी परत का क्षय होना है। सबसे ऊपरी परत का क्षय होने का अर्थ है-समस्त व्यावहारिक प्रक्रियाओं हेतु मिट्टी का बेकार हो जाना। मृदा अपरदन प्रमुख रूप से जल व वायु द्वारा होता है। यदि जल व वायु का वेग तीव्र होगा तो अपरदन की प्रक्रिया भी तीव्र होती है।

मृदा अपरदन को परिभाषित कीजिए (Define soil erosion)

अपरदन (Erosion) वह प्राकृतिक प्रक्रिया है, जिसमें चट्टानों का विखंडन और परिणामस्वरूप निकले ढीले पदार्थों का जल, पवन, इत्यादि प्रक्रमों द्वारा स्थानांतरण होता है। अपरदन के प्रक्रमों में वायु, जल तथा हिमनद और सागरीय लहरें प्रमुख हैं।

लवणीयता व क्षारीयता मृदा के दुष्प्रभाव

- ऐसे मृदा की संरचना सघन हो जाती है, जिससे इसमें जल की पारगम्यता कम हो जाती है।
- पोषक तत्वों की आपूर्ति में बाधा आती है।
- लवणों के विषैलेपन का पौधों पर दुष्प्रभाव पड़ता है।
- लवणीय व क्षारीय मृदा को पर्याप्त सिंचाई, जिप्सम, गंधक, सल्फ्यूरिक अम्ल, शोरे आदि के प्रयोग से सामान्य बनाया जा सकता है।

मृदा अपरदन के प्रकार (Types of soil erosion)

- **सामान्य अथवा भूगर्भिक अपरदन:** यह क्रमिक व दीर्घ प्रक्रिया है; इसमें जहां एक तरफ मृदा की ऊपरी परत अथवा आवरण का ह्रास होता है वहीं नवीन मृदा का भी निर्माण होता है। यह बिना किसी हानि के होने वाली प्राकृतिक प्रक्रिया है।
- **धारा तट अपरदन:** धाराएं एवं नदियां एक किनारे को काटकर तथा दूसरे किनारे पर गाद भार को निक्षेपित करके अपने प्रवाह मार्ग बदलतीं रहतीं हैं। तीव्र बाढ़ के दौरान क्षति और तीव्र हो जाती है। बिहार में कोसी नदी पिछले सौ वर्षों में अपने प्रवाहमार्ग को 100 किमी. पश्चिम की ओर ले जा चुकी है।
- **तीव्र अपरदन:** इसमें मृदा का अपरदन निर्माण की तुलना में अत्यंत तीव्र गति से होता है। मरुस्थलीय अथवा अर्द्ध-मरुस्थलीय भागों में जहां उच्च वेग की हवाएं चलती हैं तथा उन क्षेत्रों में जहां तीव्र वर्षा होती है वहां इस प्रकार से मृदा का अपरदन होता है।

- **अवनालिका अपरदन:** जैसे-जैसे प्रवाहित सतही जल की मात्रा बढ़ती जाती है, ढालों पर उसका वेग भी बढ़ता जाता है, जिसके परिणामस्वरूप क्षुद्र धाराएं चौड़ीं होकर अवनालिकाओं में बदल जाती है। आगे जाकर अवनालिकाएं विस्तृत खड्डों में परिवर्तित हो जाती हैं, जो 50 से 100 फीट तक गहरे होते हैं। भारत के एक करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में खड्ड फैले हुए हैं।
- **सर्पण अपरदन:** भूस्खलन से सर्पण अपरदन का जन्म होता है। मिट्टी के विशाल पिंड तथा यातायात व संचार में बाधाएं पैदा होती हैं। सर्पण अपरदन के प्रभाव स्थानीय होते हैं।
- **आस्फाल अपरदन:** इस प्रकार का अपरदन वर्षा बूंदों के अनावृत मृदा पर प्रहार करने के परिणामस्वरूप होता है। इस प्रक्रिया में मिट्टी उखड़कर कीचड़ के रूप में बहने लगती है।
- **परत अपरदन:** जब किसी सतही क्षेत्र से एक मोटी मृदा परत एकरूप ढंग से हट जाती है, तब उसे परत अपरदन कहा जाता है। आस्फाल अपरदन के परिणामस्वरूप होने वाला मृदा का संचलन परत अपरदन का प्राथमिक कारक होता है।
- **क्षुद्र धारा अपरदन:** जब मृदा भार से लदा हुआ प्रवाहित जल ढालों के साथ-साथ बहता है, तो वह उंगलीकार तंत्रों का निर्माण कर देता है। धारा अपरदन को परत अपरदन एवं अवनालिका अपरदन का मध्यवर्ती चरण माना जाता है।
- **समुद्र तटीय अपरदन:** इस प्रकार का अपरदन शक्तिशाली तरंगों की तीव्र क्रिया का परिणाम होता है।

अपरदन दर को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting erosion rate)

जलवायु: अतिगहन एवं दीर्घकालिक वर्षा मृदा के भारी अपरदन का कारण बनता है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार, वर्षा की मात्रा, सघनता, उर्जा एवं वितरण तथा तापमान में परिवर्तन इत्यादि महत्वपूर्ण निर्धारिक कारक हैं। **वर्षा की गतिक ऊर्जा** मृदा की प्रकृति के साथ गहरा संबंध रखती है। तापमान मृदा अपरदन की दर एवं प्रकृति को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। मृदा की बदलती हुई शुष्क एवं नम स्थितियों का परिणाम मृदा के पतले आवरण के निर्जलीकरण और जलीकरण के रूप में सामने आता है। इससे मृदा कणों का विस्तार होता है और मृदा में दरारें पड़ जाती हैं।

भू-स्थलाकृतिक कारक: इनमें सापेक्षिक उच्चावच, प्रवणता, ढाल इत्यादि पहलू शामिल हैं। सतही जल का प्रवाह वेग तथा गतिक ऊर्जा गहन प्रवणता में बदल जाती है। अधिक लम्बाई वाले ढालों पर कम लम्बाई वाले ढालों की तुलना में मृदा अपरदन अधिक व्यापक होता है।

भूमि की स्थलाकृति यह निर्धारित करती है कि किस सतह पर अपवाह प्रवाहित होगा, जो बदले में अपवाह की अपरिपक्वता को निर्धारित करता है। लम्बी, कम ढाल वाली ढलानों (विशेष रूप से पर्याप्त वनस्पति कवर के बिना) छोटी, कम खड़ी ढलानों की तुलना में भारी बारिश के दौरान कटाव की बहुत अधिक दर के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं। स्टेटर इलाके भी mudslides, भूस्खलन, और गुरुत्वाकर्षण कटाव प्रक्रियाओं के अन्य रूपों के लिए व्यापक होता हैं।

प्राकृतिक वनस्पति का आवरण: यह एक प्रभावी नियंत्रक कारक है, क्योंकि

1. वनस्पति वर्षा को अवरोधित करके भूपर्पटी को वर्षा बूंदों के प्रत्यक्ष प्रभाव से बचाती है।
2. वर्षा जल के प्रवाह को नियंत्रित करके वनस्पति उसे भू-सतह के भीतर रिसने का अवसर देती है।
3. पौधों की जड़ों मृदा कणों के पृथक्करण एवं परिवहन की दर को घटाती हैं।

4. जड़ों के प्रभाव के फलस्वरूप कणिकायन, मृदा क्षमता एवं छिद्रता में बढ़ोतरी होती है।
5. मृदा वनस्पति के कारण उच्च एवं निम्न तापमान के घातक प्रभावों से बची रहती है, जिससे उसमें दरारें विकसित नहीं होतीं।
6. वनस्पति पवन गति को धीमा करके मृदा अपरदन में कमी लाती है।

मृदा प्रकृति: मृदा की अपरदनशीलता का सम्बंध इसके भौतिक व रासायनिक गुणों, जैसे- कणों का आकार, वितरण, ह्यूमस अंश, संरचना, पारगम्यता, जड़ अंश, क्षमता इत्यादि से होता है। फसल एवं भूमि प्रबंधन भी मृदा अपरदन को प्रभावित करता है। एफएओ के अनुसार मृदा कणों की अनासक्ति, परिवाहंता तथा अणु आकर्षण और मृदा की आर्द्रता धारण क्षमता व गहराई मृदा अपरदन को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक हैं।

विकास: मानव भूमि विकास, कृषि और शहरी विकास सहित रूपों में, क्षरण और तलछट परिवहन में एक महत्वपूर्ण कारक माना जाता है। ताइवान में, द्वीप के उत्तरी, मध्य और दक्षिणी क्षेत्रों में तलछट भार में वृद्धि 20 वीं शताब्दी में प्रत्येक क्षेत्र के लिए विकास की समयरेखा के साथ देखी जा सकती है।

वायु वेग: मजबूत एवं तेज हवाओं में अपरदन की व्यापक क्षमता होती है। इस प्रकार वायु वेग का अपरदन की तीव्रता के साथ प्रत्यक्ष आनुपतिक संबंध है।

मृदा अपरदन के कारण (Reasons of Soil Erosion)

- **वनों की कटाई:** वनों की कटाई की वजह से मिट्टी की सतह से खनिज और मिट्टी की परतों को हटाकर, मिट्टी को एक साथ बांधने वाले वानस्पतिक आवरण को हटाने और लॉगिंग उपकरण से भारी मिट्टी संघनन के कारण खनिज कटाव के कारण कटाव की दर बढ़ जाती है। एक बार जब पेड़ों को आग या लॉगिंग द्वारा हटा दिया जाता है, तो घुसपैठ की दर उच्च हो जाती है और जंगल के फर्श के निचले स्तर तक क्षरण होता है। वनस्पति आवरण के लोप ने पश्चिमी घाट, उत्तर प्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश में विस्तृत अपरदन को जन्म दिया है।
- **त्रुटिपूर्ण कृषि पद्धतियां:** नीलगिरी क्षेत्र में आलू एवं अदरक की फसलों को बिना अपरदन-विरोधी उपाय (ढालों पर सोपानों का निर्माण आदि) किये उगाया जाता है। ढालों पर स्थित वनों को भी पौध फसलें उगाने के क्रम में साफ किया जा चुका है। इस प्रकार की त्रुटिपूर्ण कृषि पद्धतियों के कारण मृदा अपरदन में तेजी आती है। इन क्षेत्रों में भूस्खलन एक सामान्य लक्षण बन जाता है।
- **झूम कृषि:** झूम कृषि एक पारिस्थितिक रूप से विनाशकारी तथा अनार्थिक कृषि पद्धति है। झूम कृषि की उत्तर-पूर्व के पहाड़ी क्षेत्रों छोटानागपुर, ओडीशा, मध्य प्रदेश तथा आंध्र प्रदेश में विशेषतः जनजातियों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। झूम या स्थानांतरण कृषि के कारण उत्तर-पूर्वी पहाड़ी भागों का बहुत बड़ा क्षेत्र मृदा अपरदन का शिकार हो चुका है।
- **रेल मार्ग एवं सड़कों के निर्माण हेतु प्राकृतिक अपवाह तत्रों का रूपांतरण:** रेल पटरियों एवं सड़कों को इस प्रकार बिछाया जाना चाहिए कि वे आस-पास की भूमि से ऊंचे स्तर पर रहें, किन्तु कभी-कभी रेल पटरियां एवं सड़कें प्राकृतिक अपवाह तंत्रों के मार्ग में बाधा बन जाते हैं। इससे एक ओर जलाक्रांति तथा दूसरी ओर जल न्यूनता की समस्या पैदा होती है। ये सभी कारक एक या अधिक तरीकों से मृदा अपरदन में अपना योगदान देते हैं
- **उचित भू-पृष्ठीय अपवाह का अभाव:** उचित अपवाह के अभाव में निचले क्षेत्रों में जलाक्रांति हो जाती है, जो शीर्ष मृदा संस्तर को ढीला करके उसे अपरदन का शिकार बना देती है।

- **दावानल:** कभी-कभी जंगल में प्राकृतिक कारणों से आग लग जाती है, किंतु मानव द्वारा लगायी गयी आग अपेक्षाकृत अधिक विनाशकारी होती है। इसके परिणामस्वरूप वनावरण सदैव के लिए लुप्त हो जाता है तथा मिट्टी अपरदन की समस्या से ग्रस्त हो जाती है।

मृदा अपरदन के दुष्परिणाम (Side effects of soil erosion)

- आकस्मिक बाढ़ों का प्रकोप।
- नदियों के मार्ग में बालू एकत्रित होने से जलधारा का परिवर्तन तथा उससे अनेक प्रकार की हानियां।
- कृषि योग्य उर्वर भूमि का नष्ट होना।
- आवरण अपरदन के कारण भूमि की उर्वर ऊपरी परत का नष्ट होना।
- भौम जल स्तर गिरने से पेय तथा सिंचाई के लिए जल में कमी होना।
- शुष्क मरुभूमि का विस्तार होने से स्थानीय जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव एवं परोक्ष रूप से कृषि पर दुष्प्रभाव।
- वनस्पति आवरण नष्ट होने से इमारती व जलाऊ लकड़ी की समस्या तथा वन्य जीवन पर दुष्प्रभाव।
- भूस्खलन से सड़कों का विनाश, आदि।

मृदा अपरदन को कम करने के उपाय (Measures to reduce soil erosion)

जैविक उपाय-

मौजूदा भू-पृष्ठीय आवरण में सुधार: इस प्रकार का सुधार बरसी (एक चारा फसल) जैसी आवरण फसलें या दूब, कुजू, दीनानाथ इत्यादि घासों को उगाकर मृदा आवरण को सुरक्षित रखने पर ही संभव है।

पट्टीदार खेती: इसके अंतर्गत अपरदन रोधी फसलों (घास, दालें आदि) के साथ अपरदन में सहायक फसलों (ज्वार, बाजरा, मक्का आदि) को वैकल्पिक पट्टियों के अंतर्गत उगाया जाता है। अपरदन रोधी फसल पट्टियां जल एवं मृदा के प्रवाह को रोक लेती हैं। **फसल चक्रण:** इसके अंतर्गत एक ही खेत में दो या अधिक फसलों को क्रमानुसार उगाया जाता है ताकि मृदा की उर्वरता कायम रखी जा सके। स्पष्ट कर्षित फसलों (तम्बाकू आदि) को लगातार उगाये जाने पर मृदा अपरदन में तीव्रता आती है। एक अच्छे फसल चक्र के अंतर्गत सघन रोपित लघु अनाज फसलें तथा फलीदार पौधे (जो मृदा अपरदन को नियंत्रित कर सकें) शामिल होने चाहिए।

ठूंठदार पलवार: इसका तात्पर्य भूमि के ऊपर फसल एवं वनस्पति ठूंठों को छोड़ देने से है, ताकि मृदा अपरदन से मृदा संस्तर को सुरक्षित रखा जा सके। ठूठदार पलवार से वाष्पीकरण में कमी तथा रिसाव क्षमता में वृद्धि होती है, जिसके परिणामस्वरूप मृदा की नमी का संरक्षण होता है।

जैविक उर्वरकों का प्रयोग: हरित खाद, गोबर खाद, कृषि अपशिष्टों इत्यादि के उपयोग से मृदा संरचना में सुधार होता है। रवेदार एवं भुरभुरी मृदा संरचना से मिट्टी की रिसाव क्षमता एवं पारगम्यता बढ़ती है तथा नमी के संरक्षण में सहायता मिलती है।

अन्य उपायों के अंतर्गत अति चराई पर नियंत्रण, पालतू पशु अधिशेष में कमी, झूम खेती पर प्रतिबंध तथा दावानल के विरुद्ध रोकथाम उपायों को शामिल किया जा सकता है।

भौतिक या यांत्रिक उपाय:

1. **सोपानीकरण:** तीव्र ढालों पर सोपानों तथा चपटे चबूतरों का श्रृंखलाबद्ध निर्माण किया जाना चाहिए इससे प्रत्येक सोपान या चबूतरे पर पानी को एकत्रित करके फसल वृद्धि हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है।
2. समुचित अपवाह तत्रों का निर्माण तथा अवनालिकाओं का भराव।
3. **समोच्चकर्षण:** ढालू भूमि पर सभी प्रकार की कर्षण क्रियाएं ढालों के उचित कोणों पर की जानी चाहिए, इससे प्रत्येक खांचे में प्रवाहित जल की पर्याप्त मात्रा एकत्रित हो जाती है, जो मृदा द्वारा अवशोषित कर ली जाती है।
4. **समोच्च बंध:** इसके अंतर्गत भूमि की ढाल को छोटे और अधिक समस्तर वाले कक्षों में विभाजित कर दिया जाता है। ऐसा करने के लिए समोच्यों के साथ-साथ उपयुक्त आकार वाली भौतिक संरचनाओं का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार, प्रत्येक बंध वर्षा जल को विभिन्न कक्षों में संग्रहीत कर लेता है।
5. **बेसिन लिस्टिंग:** इसके अंतर्गत ढालों पर एक नियमित अंतराल के बाद लघु बेसिनों या गर्तों का निर्माण किया जाता है, जो जल पत्राह को नियंत्रित रखने तथा जल को संरक्षित करने में सहायक होते हैं।
6. **जल संग्रहण:** इसमें जल निचले क्षेत्रों में संग्रहीत या प्रवाहित करने का प्रयास किया जाता है, जो प्रवाह नियंत्रण के साथ-साथ बाढ़ों को रोकने में भी सहायक होता है।
7. **वैज्ञानिक ढाल प्रबंधन:** ढालों पर की जाने वाली फसल गतिविधियां ढाल की प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए। यदि ढाल का अनुपात 1:4 से 1:7 के मध्य है, तो उस पर उचित खेती की जा सकती है। यदि उक्त अनुपात और अधिक है, तो ऐसी ढालू भूमि पर चरागाहों का विकास किया जाना चाहिए। इससे भी अधिक ढाल अनुपात वाली भूमि पर वानिकी गतिविधियों का प्रसार किया जाना चाहिए। अत्यधिक उच्च अनुपात वाली ढालों पर किसी भी प्रकार की फसल क्रिया के लिए सोपानों या वेदिकाओं का निर्माण आवश्यक हो जाता है।

भारत में मृदा अपरदन के क्षेत्र (Soil erosion zones in India)

वर्तमान समय में मृदा अपरदन की समस्या भारतीय कृषि की एक बहुत बड़ी समस्या बन गई है। देश में प्रति वर्ष 5 बिलियन टन मिट्टी का अपरदन होता है। मृदा अपरदन के मुख्य कारणों के आधार पर भारत को निम्न क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र (असम, पश्चिम बंगाल, आदि): मृदा अपरदन का मुख्य कारण तीव्र वर्षा, बाढ़ तथा व्यापक स्तर पर नदी के किनारों का कटाव है।

हिमालय की शिवालिक पर्वत-श्रेणियां: वनस्पतियों का विनाश पहला कारण है। गाद जमा होने से नदियों में बाढ़ आ जाना दूसरा महत्वपूर्ण कारण है।

नदी तट (यमुना, चम्बल, माही, साबरमती, आदि): उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और मध्यप्रदेश की कृषि भूमि के काफी विस्तृत भाग को बीहड़ों (Ravines) में परवर्तित होना मृदा अपरदन का परिणाम है।

दक्षिणी भारत के पर्वत (नीलगिरि): दक्षिणी पहाड़ी क्षेत्र में गहन मृदा अपरदन नुकीले ढाल, तीव्र वर्षा तथा कृषि का अनुचित ढंग हो सकता है।

राजस्थान व दक्षिणी पंजाब का शुष्क क्षेत्र: पंजाब व राजस्थान के कुछ भागों, यथा- कोटा, बीकानेर, भरतपुर, जयपुर तथा जोधपुर में वायु द्वारा मृदा अपरदन होता है।

मृदा संरक्षण (soil Conservation)

भारत में मृदा अपरदन की तीव्र गति को निम्नलिखित उपायों द्वारा कम किया जा सकता है और कहीं-कहीं तो इसे पूर्णतः नियंत्रित भी किया जा सकता है-

1. वृक्षारोपण करना तथा वृक्षों को समूल नष्ट न करना।
2. बाढ़ को नियंत्रित करने के लिए बांधों का निर्माण करना और विशाल जलाशय बनाना।
3. पहाड़ों पर सीढ़ीनुमा खेत बनाना और ढाल के आर-पार जुताई करना।
4. पशु-चारण को नियंत्रित करना।
5. कृषि योग्य भूमि को कम से कम परती छोड़ना।
6. फसलों की अदला-वदली कर उन्हें उगाना।
7. मरुस्थलों को नियंत्रित करने के लिए वनों की कतार लगाना।
8. भूमि की उर्वरक क्षमता एक समान बनाए रखने के लिए खाद व उर्वरक का समुचित उपयोग करना।
9. स्थायी कृषि क्षेत्र विकसित करना, क्योंकि स्थानांतरित कृषि में वनों की सफाई कर दी जाती है।

भारत में मृदा संरक्षण के कार्यक्रम को क्रियान्वित करने के लिए विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कुछ राशि आवंटित की जाती है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में भूमि संरक्षण के कार्य के लिए देशभर में 10 क्षेत्रीय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केंद्र खोले गए। 1952 में राजस्थान के जोधपुर जिले में मरुस्थल वृक्षारोपण तथा अनुसंधान केंद्र (कजरी) की स्थापना की गई। यह केंद्र मरुस्थल में उपयुक्त पौधे लगाता है तथा यहां से पौधे एवं बीज उगाने के लिए वितरित किए जाते हैं। प्रथम योजना से लेकर अभी तक की योजनाओं में इस कार्यक्रम के लिए कई करोड़ रुपये खर्च किए गए और कई लाख हेक्टेयर भूमि को संरक्षण प्रदान किया जा चुका है, परंतु अभी भी इसमें सुधार की आवश्यकता शेष है।

You just read: Mrda Aparadan Kise Kahate Hain